International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 01-12-2020; Accepted: 15-12-2020; Published: 30-12-2020
www.socialsciencejournal.in
Volume 6; Issue 6; 2020; Page No. 180-182

सुखवाद और उपयोगितावाद

डॉ. अनन्त कुमार यादव
अध्यक्ष, दर्शन विभाग, इन्स्टीट्यूट ऑफ ओरियन्टल फिलोसोफी, वृन्दावन, मथुरा, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
सामान्यतः मनुष्य जब कोई कर्म करता है तो यह माना जाता है कि इस कर्म करने के मूल में सुख प्राप्त करने की इच्छा ही प्रमुख प्रेरक तत्व है। किंतु जब एक ही समय में विभिन्न सुखों के बीच चुनाव का प्रश्न उठता है तो इस चुनाव हेतु कुछ मानक की आवश्यकता होती है जिसके परिणाम स्वरूप सुखों के बीच गुणात्मक एवं परिमाणात्मक भेद दृष्टिगत होने लगता है। इसी प्रकार बहुत सारे ऐसे कर्म हैं जो सुख की प्रेरणा से नहीं बल्कि कर्तव्य की प्रेरणा से संपादित किये जाते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप सुखवाद की सीमा निर्धारित हो जाती है। इस वैचारिक यात्रा में सुखवाद, उपयोगितावाद में और उपयोगितावाद, परिष्कृत उपयोगितावाद में रूपान्तरित हो जाता है। यह और बात है कि परीष्कृत उपयोगितावाद की अपनी भी सीमा है।

मूल शब्दः सुखवाद और उपयोगितावाद, गुणात्मक एवं परिमाणात्मक भेद

सुखवाद और उपयोगितावाद

सुखवाद (Hedonism): सुखवाद का अंग्रेजी पर्याय Hedonism है। हीडोनिज्म यूनानी शब्द हीडोन से बना है, जिसका अर्थ 'सुख' है। इसलिये वह मत जो सुख को ही मानव जीवन का परमलक्ष्य मानता है, सुखवाद कहलाता है। वस्तुतः सुखवाद में सुख को ही नैतिकता का मापदण्ड माना जाता है कहने का मतलब यह है कि जो कर्म सुख की प्राप्ति में सहायक होता है, वह नैतिक, शुभ या उचित है और जो इसकी प्राप्ति मे बाधा डालता है वह अनैतिक, अशुभ या अनुचित है। उल्लेखनीय है कि सुखवाद के दो प्रकार माने जाते है परार्थमूलक नैतिक सुखवाद को उपयोगितावाद भी कहते है।

1. मनोवैज्ञानिक सुखवाद
2. नैतिक सुखवाद

1. मनोवैज्ञानिक सुखवाद

मनोवैज्ञानिक सुखवाद के अनुसार सुख मनुष्य का स्वाभाविक लक्ष्य है। कहने का अर्थ यह है कि मनुष्य स्वभाव से ही सुख की इच्छा करता है और दुख से छुटकारा पाना चाहता है वस्तुतः मनुष्य सदैव उसी वस्तु की इच्छा करता है जिससे उसको सुख की प्राप्ति हो सकें। इसप्रकार इस सिद्धान्त में सुख साध्य है और वस्तु साधन।

2. नैतिक सुखवाद

जबकि नैतिक सुखवाद के अनुसार मनुष्य के जीवन का चरम लक्ष्य सुख की प्राप्ति होनी चाहियें। कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य सदैव सुख की खोज नहीं करता है, बल्कि उसे सुख की खोज करनी चाहियें। वस्तुतः नैतिक सुखवाद, मनोवैज्ञानिक सुखवाद से मूलतः भिन्न है। जहाँ मनोवैज्ञानिक सुखवाद के अनुसार मनुष्य सदैव सुख की खोज तथा दुःख का त्याग करता है, वहीं नैतिक सुखवाद के अनुसार मनुष्य को सुख की खोज तथा दुःख का त्याग करना चाहियें। स्पष्ट है, मनौवैज्ञानिक सुखवाद में सुख प्राप्त करना मनुष्य का स्वभाव बतलाया गया है। जबकि नैतिक सुखवाद में सुख प्राप्त करना मनुष्य का स्वभाव नहीं है बल्कि सुख को आदर्श मानकर उसको पाने की कोशिश करनी चाहिये। चूँकि हम जानते है नीतिशास्त्र का सम्बन्ध चाहिये से है, अतः नैतिक सुखवाद ही नीतिशास्त्र का मुख्य विषय है।

उल्लेखनीय है कि नैतिक सुखवाद के दो प्रकार है। (a) स्वार्थमूलक नैतिक सुखवाद और (b) परार्थमूलक नैतिक सुखवाद (उपयोगितावाद)। स्वार्थ मूलक नैतिक सुखवाद का मानना है कि व्यक्ति को अपने ही अधिकतम सुख प्राप्ति के लिये कर्म करना चाहियें। इस सिद्धान्त का नैतिक मापदण्ड "अपना अधिकतम सुख" है। उल्लेखनीय है कि स्वार्थमूलक नैतिक सुखवाद के दो रूप–निकृष्ट और उत्कृष्ट, मिलते है। निकृष्ट में इन्द्रियसुखों और उत्कृष्ट में बौद्धिक सुखो को महत्व दिया गया है। निकृष्ट स्वार्थ मूलक नैतिक सुखवाद के दार्शनिकों में एरिस्टिपस, हाब्स, मैन्डेविल और चार्वाक प्रमुख हैं। जबकि उत्कृष्ट स्वार्थमूलक नैतिक सुखवाद में एपिक्यूरस प्रमुख है।

ध्यातव्य है कि परार्थमूलक नैतिक सुखवाद को उपयोगितावाद भी कहते है। परार्थमूलक नैतिक सुखवाद का मानना है कि हमें वही कर्म करना चाहिये जिससे "अधिकतम व्यक्तियों को अधिकतम सुख" प्राप्त हो सकें। वस्तुतः इस आदर्श को प्राप्त करने में जो कर्म सहायक है वह शुभ और जो बाधक है वह अशुभ कहलाते है। उल्लेखनीय है कि परार्थमूलक नैतिक सुखवाद को उपयोगितावाद नाम जे0एस0मिल ने दिया है। वस्तुतः इस उपयोगितावाद के दो रूप प्रचलित है – (1) निकृष्ट और (2) उत्कृष्ट। निकृष्ट उपयोगितावाद के प्रमुख प्रतिनिधि दार्शनिक बेन्थम है और उत्कृष्ट उपयोगितावाद के प्रमुख प्रतिनिधि दार्शनिक जे0एस0मिल0 है।

बेंथम का उपयोगितावाद

बेथंम एक समाजसुधारक और भौतिकवादी दार्शनिक थे। यहीं कारण है कि ये उपयोगिता और सुख को दृष्टि में रखकर कर्म पर विचार करते हुये कहते हैं कि जो कर्म या नियम सुख की प्राप्ति में सहायक होता है वह उपयोगी हैं। इस प्रकार बेंथम का सुख को सामाजिक दृष्टि से उपयोगी मानना विशेष महत्वपूर्ण है। यहीं कारण है कि इनके सुखवाद को परार्थमूलक सुखवाद या सुखवादी उपयोगिता वाद कहा जाता है।

ध्यातव्य है कि बेंथम सुखों में केवल परिमाणात्मक भेद मानता है, गुणात्मक नहीं। इसी बात को वह अपनी पुस्तक (Principles of Morals and Legislation) "प्रिन्सिपल ऑफ मोरलस एण्ड लेजिस्लेशन" स्पष्ट करते हुये कहता है कि– "सुख के परिमाण के बराबर होने पर पुशपिन (खेल) उतना ही अच्छा है जितना कि कविता।" इस प्रकार वह शारीरिक सुख और मानसिक सुख को

समान मानता है। चूँकि बेंथम सुखों में परिमाणगत भेद मानता है, इसलिये सुख की गणना के लिये एक विधि प्रस्तुत करता है जिसे नैतिक अंकगणित या सुखकलन कहता है। उल्लेखनीय है कि सुखों को तौलने या मापने की सुखकलन विधि में वह सात कसौटी (मानक) की चर्चा करता है जो निम्न हैः–

1. **तीव्रताः** जो सुख अधिक तीव्र हो उसे ग्रहण करना चाहियें। जैसे जाड़े के दिन में धूप लेना कम तीव्रता का सुख है, जबकि चटपटा व्यंजन खाने से अधिक तीव्रता का सुख मिलता है। अतः चटपटा व्यजंन का चुनाव ठीक है।

2. **अवधिः** जो सुख अधिक समय तक बना रहे उसे चुनना चाहिए।

3. **निकटताः** दूर वाले सुख की अपेक्षा निकटवाला सुख ज्यादा अच्छा है।

4. **निश्चितताः** जो सुख निश्चित है वह अनिश्चित से अच्छा है।

5. **विशुद्धताः** जिस सुख में तनिक भी दुःख का मीश्रण न हो उसे चुनना चाहियें।

6. **उत्पादकताः** जो सुख अन्य सुखो को उत्पन्न करता है वह उस सुख से अच्छा है जो अनुत्पादक है।

7. **व्यापकताः** जिस सुख से अधिकतम लोग लाभान्वित हो उसे चुनना चाहियें।

इसप्रकार बेंथम का कहना है कि समस्त सात तत्व ही सुख की मात्रा और उसकी बांछनीयता को निश्चित करते है। उल्लेखनीय है कि इन सात तत्वों में शुरू के छः तत्व केवल व्यक्ति के लिये होते है। जबकि सातवाँ तत्व उस व्यक्ति के साथ–साथ अन्य व्यक्तियों के बारे में भी विचार करता है। वास्तव में सातवाँ तत्व 'व्यापकता' का मूल संदेश यह है कि जिस कर्म या नियम से जितने अधिक व्यक्ति सुख प्राप्त कर सकेगें वह उतना शुभ व बांछनीय होगा। व्यापकता का यह सिद्धान्त बेंथम को स्वार्थवाद से परार्थवाद या सर्वार्थवाद की ओर ले जाता है। उल्लेखनीय है कि बेथम सभी व्यक्तियों के सुख के इसी न्यायपूर्ण वितरण को स्पष्ट करते हुये कहता है कि – "प्रत्येक व्यक्ति का महत्व केवल एक व्यक्ति का ही महत्व है, इससे अधिक नहीं"

किन्तु यहाँ एक स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि बेथम के अनुसार व्यक्ति मूलतः स्वार्थी व सुखवादी होता है तो फिर कैसे वह "अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुख" की बात करता है? इस प्रश्न के उत्तर में बेथम कहता है कि ऐसा व्यक्ति 'चार दबावों' के कारण करता है, जो निम्न है परार्थमूलक नैतिक सुखवाद को उपयोगितावाद भी कहते है।

1. **भौतिक दबावः** भौतिक दबाव प्रकृति के वे नियम है जिसका उल्लंघन करने पर शारीरिक कष्ट होता है।

2. **राजनैतिक दबावः** राजनैतिक दबाव राज्य का कानून होता है, और यदि कोई व्यक्ति कानून का उल्लंघन कर अन्य व्यक्ति को कष्ट पहुचाता है तो राज्य उसे दण्डित करेगा।

3. **सामाजिक दबावः** जब कोई व्यक्ति सामाजिक नियमों का उल्लंघन कर किसी दूसरे व्यक्ति को कष्ट पहुँचायेगा तो समाज उसकी निदा करता है। इसे ही सामाजिक दबाब कहते है।

4. **धार्मिक दबाबः** बहुत से व्यक्तियों का ऐसा विश्वास है कि यदि हम दूसरों को हानि पहुचायेगा तो ईश्वर हमें दण्ड देगा। ईश्वर का यह भय धार्मिक दबाब कहलाता है।

इस प्रकार बेथम यह बताता है कि प्रकृति राज्य समाज और ईश्वर द्वारा दिये जाने वाले दण्ड व पुरस्कार के कारण ही व्यक्ति अपने सुख के साथ–साथ दूसरों के सुखों का भी ध्यान रखता है। परिणामस्वरूप व्यक्ति इन बाहरी दबावों से स्वार्थी के स्थान पर परार्थी या परोपकारी बन जाता है। वास्तव में प्रचलित प्राचीन सुखवादी विचारधारा की तुलना में बेंथम का सुखवादी उपयोगितावाद ज्यादा उत्कृष्ट है। किन्तु उसकी कई कमियों के कारण आलोचना की जाती है, जो निम्न है।

1. बेंथम के सुखवाद की पहली महत्वपूर्ण कमी यह है कि ये सुखों में केवल परिमाणत्मक भेद मानते है, गुणात्मक नहीं। इसी कारण कार्लाइल ने इसके दर्शन को शूकर–दर्शन कहा है।
2. बेंथम ने सुख के परिमाण की गणना के लिये जो सुखकलन सिद्धान्त प्रस्तुत किया है, वह ठीक नहीं है। यदि सुख । अधिक तीव्र और कम अवधि का हो तथा सुख ठ कम तीव्र और अधिक अवधि का हो तो ऐसे में सुखकलन सिद्धान्त फेल हो जाता है।
3. बैंथम का सिद्धान्त सुखवादी होने के कारण इसमें सुखवाद की सारी कमियॉ विद्यमान है। इस प्रकार यह एक विकसित सिद्धांत होते हुये भी पूर्णतया संतोषजनक नहीं है।

मिल का उपयोगितावाद

जिस उपयोगितावाद का प्रारम्भ जरमी बेंथम के दर्शन में होता है, उसका विकसित और तर्कसंगत रूप जॉन स्टूअर्ट मिल के दर्शन में देखने को मिलता है। अपने इस नीतिशास्त्रीय विचार को मिल ने अपनी पुस्तक 'यूटिलिटेरियनिज्म' में व्यक्त किया है। अपने सिद्धान्त को स्पष्ट करते हुये वह कहता है कि – "उपयोगितावाद वह मत है जो नैतिकता को अधिकतम के सुख पर आधारित करता है और यह मानता है कि कर्म उस अनुपात में उचित है जिस अनुपात में वह सुख की वृद्धि करता है। साथ ही सुख का अर्थ इन्द्रिय भोग और दुःख का अभाव है।" इस विवेचना से स्पष्ट है कि मिल ने भी बेथम के सिद्धान्त को ही लगभग स्वीकार कर लिया है।

किन्तु ध्यान देने योग्य बात यह है कि बेंथम जहाँ सुखो में केवल परिमाणात्मक भेद मानता है, वहीं मिल परिमाणात्मक के साथ–साथ गुणात्मक भेद को भी स्वीकार करता है। यहीं कारण है कि मिल के सिद्धान्त को सुसंस्कृत या परिष्कृत उपयोगितावाद कहा जाता हैं। अपने इसी दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुये मिल कहता है कि– "एक सन्तुष्ट शूकर होने की अपेक्षा असन्तुष्ट मनुष्य होना अधिक अच्छा है और एक सन्तुष्ट मूर्ख होने की अपेक्षा असन्तुष्ट सुकरात होना अधिक अच्छा है।"

उल्लेखनीय है कि सुख को अन्तिम लक्ष्य मानने के सन्दर्भ में मिल कहता है कि इसके लिये कोई ठोस प्रमाण नहीं दिया जा सकता है। फिर भी एक साधारण तर्क प्रस्तुत करते हुये वह कहता है कि "किसी वस्तु के दृश्य होने का एक मात्र प्रमाण यही हैं कि लोग उसे वास्तव में देखते है .....। इसी प्रकार कोई वस्तु वांछनीय है का प्रमाण यहीं है कि लोग वास्तव में उसकी इच्छा करते है। "इसी प्रकार अपने सिद्धान्त को व्यापक आधार देते हुये वह कहता है कि – "प्रत्येक व्यक्ति का सुख उसके लिये शुभ है, अतः सामान्य सुख व्यक्ति समुच्चय के लिये शुभ है।"

उल्लेखनीय है कि व्यक्ति के स्वार्थी से परार्थी होने के पीछे जहाँ बेन्थम चार दबाबों को स्वीकार करता है वहीं मिल इन चारों

दबावों के साथ–साथ, पाचवाँ दबाब भी स्वीकार करता है। इस पाँचवे दबाब को वह आन्तरिक दबाब कहता है। वस्तुतः यह आन्तरिक दबाब बाह्य तत्व पर आधारित न हो करके मनुष्य की स्वाभाविक सामाजिक भावनाओं पर आधारित है। इसी सामाजिक भावना तथा परोपकार वृत्ति से प्रेरित होकर के ही मनुष्य दूसरो के सुखों के लिये अपने सुख का त्याग करता है। यह आन्तरिक दबाब ही नैतिकता का मूल स्रोत है।

यदि मिल के दर्शन का मूल्यांकन करें तो यह स्पष्ट होता है कि इसका दर्शन बेन्थम के दर्शन मे एक सुधार है। फिर भी इनके दर्शन के कुछ बिन्दुओं पर आपत्ति की जा सकती है।

1. जब मिल तर्क देते हुये यह कहता है कि– "एक व्यक्ति का सुख उसके लिये शुभ है। इसलिये सामान्य सुख व्यक्ति समूह के लिये शुभ है।" निश्चय ही मिल के इस तर्क में संग्रहदोष विद्यमान है। जैसे– एक व्यक्ति के लिये शराब पीना दवा हो सकता है किन्तु इस आधार पर यह कहना है कि शराबपीना सभी व्यक्तियों के लिये लाभदायी होगा, गलत है।
2. साथ ही सुखवादी दर्शन होने के कारण मिल के दर्शन में सुखवाद की कई कमियॉ विद्यमान है।
3. इसके दर्शन में भी सुखों के न्यायपूर्ण वितरण के लिये आधार नही प्रस्तुत किया गया है। इसप्रकार स्पष्ट है कि उपयोगितावाद एक निर्दोष सिद्धान्त नहीं है। वास्तव में सुखवाद को जरमी बेन्थम ने परिष्कृत करके एक नयी उचाई दिया और इसे उपयोगितावाद में परिणित किया। यह बैंथम की दर्शन जगत को एक देन है। जबकि मिल ने बैंथम के उपयोगितावाद को और परिष्कृत करते हुयें सुखों में गुणात्मक भेद स्वीकार कर और पांचवे दबाव 'आन्तरिक दबाव' को स्वीकार कर इसे ज्यादा सुसंगत बना दिया। यह और बात है कि इसक बावजूद उपयोगितावाद की अपनी कुछ कमियाँ व सीमाएं है।

सन्दर्भ सूची

1. नीति शास्त्र के मूल सिद्धान्त– डा0 वेद प्रकाश वर्मा एलाइड पब्लिशर्स नई दिल्ली
2. अधि नीति शास्त्र के मूल सिद्धान्त– डा0 वेद प्रकाश वर्मा एलाइड पब्लिशर्स नई दिल्ली
3. महात्मा गाँधी का नैतिक दर्शन– डॉ0 वेद प्रकाश वर्मा, इन्दु प्रकाशन दिल्ली
4. कांट का दर्शन– समाजीत मिश्र, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ
5. A Manual of Ethics part I & II – Jadunath Sinha, Sinha Publishing House – Calcutta
6. चिन्तन के विविध आयाम – डॉ0 दुर्गादत्त पाण्डेय, प्रामानिक पब्लिकेशन, इलाहाबाद
7. The Ethics of the Gita– G.W. Kaveeshwar, Motilal Banarsi Das Delhi.
8. धर्म दर्शन – जॉनहिक, अनुवादक – राजेश कुमार सिंह, प्रेन्टिस हॉल ऑफ इण्डिया, दिल्ली।
9. नीतिशास्त्र का सर्वेक्षण – प्रो0 संगमलाल पाण्डेय
10. An introduction to Ethics– William Lillie Surajeet Publication , Delhi.